शोध मंथन Vol. XIII No.I Jan.-Mar.2022 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

अस्तित्ववादी चेतना और मोहन राकेश के उपन्यास

प्राप्तिः 16.02.2022
स्वीकृतः 15.03.2022

डॉ० राजनारायण शुक्ल
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग
एस० डी० कॉलेज, गाजियाबाद
ईमेलः *yug_shilpi@yahoo.com*

सारांश

मोहन राकेश ने आधुनिकता बोध के धरातल पर अस्तित्ववादी चिंतन के परिपार्श्व में अपने उपन्यास की सर्जना की है। इसका विवेचन करते हुए यह कहना अधिक उचित लगता है कि मोहन राकेश का यह सामाजिक अस्तित्व चिंतन मूलतः व्यक्तिवादी स्तर पर अपनी गहरी छाप बनाए हुए समाज में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्षरत मानक की एक ऐसी कथात्मक अभिव्यक्ति के रूप में उभरता है जो समाज में रहकर भी समाज से जुड़ पाने मे विवशता अनुभव करता है। व्यक्तिवादी अस्तित्व चेतना बताती है कि जीवित रहना ही मनुष्य की नियति है। उसे जीवन का अर्थ चूक जाने की स्थिति में भी लाचार होकर जीना है क्योंकि पुरानी मान्यताएं अर्थहीन हो चुकी हैं। और मनुष्य के सामने कोई ठोस विकल्प भी नहीं है।

अस्तित्ववादी चिंतन की आधारभूमि पर विकसित मोहन राकेश के तीनों उपन्यास मुख्यतः नारी पुरुष के बदलते संदर्भ और उनके बीच पनपते जटिल संबंधों की सूक्ष्म व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

अस्तित्ववादी विचारधारा का उद्‌गम जर्मन दार्शनिक 'हसरेल' तथा 'हेडेगर' और 'डेनिश' चिन्तक 'कीर्कगार्द' की विचार पद्धतियों से माना जाता है। परंतु वर्तमान युग में उसकी ख्याति का श्रेय प्रसिद्ध अस्तित्ववादी चिंतक ज्यां पाल सार्त्र को जाता है। डा0 भरत भूषण अग्रवाल कहते हैं अस्तित्ववाद मानव जन्म और मानव जीवन को एक अभिनव रूप में ग्रहण करता है। वर्गसा ने जिसे चिरंतन प्रवहमान एवं परिवर्तनशील कहा यह उसी का अगला चरण है। यह उस युग का वैचारिक विग्रह है। पूंजीवाद फासिजम का रूप ले चुका है। और साम्यवाद शक्तिशाली सुसज्जित वर्ग राज्य का। बाहय संघर्ष में आबद्ध मनुष्य विवश एवं निरूपाय होकर अपने अस्तित्व के संबंध में प्रश्न उठाता है तो पाता है कि उसका अस्तित्व अनेक शक्तियों से अनुशासित है, जिन पर उसका कोई वश नहीं है।[1]

अस्तित्ववाद साहित्य में मानवीय नियति एवं मानवीय जीवन के यथार्थपरख विश्लेषण के रूप में उपलब्ध होता है। हिंदी के व्यक्तिवादी उपन्यासकारों ने अपनी रचनाओं में मानवीय चेतना और उसकी नियति का जो यथार्थपरक किया है, उसके मूल में अस्तित्व वादी चिंतन का प्रभाव पड़ा है। ऐसे उपन्यासकारों में अज्ञेय, नरेश मेहता, देवराज और मोहन राकेश प्रमुख है। मोहन राकेश के उपन्यासों में अस्तित्ववादी चिंतन का विवेचन निम्नांकित तीन स्तरों पर किया जा सकता है–

01– सामाजिक अस्तित्व की चेतना।

02– भौतिक अस्तित्व चेतना।

03– व्यक्तिवादी अस्तित्व चेतना।

आज का व्यक्ति समाज से कटा हुआ जीवन जी रहा है। सामाजिक रूढ़ियों, मान्यताओं के प्रति उसे कोई आसक्ति नहीं है। वह चेतना के धरातल पर सोचता है। वह ईश्वर की सत्ता को नहीं मानता अतः धर्म पर भी उसे कोई विश्वास नहीं है। समाज के बीच रहकर भी उसकी स्थिति एक द्वीप के समान है। मुक्तिबोध ने इस स्थिति का चित्रण इस प्रकार किया है–

''मेरे साथ खंडहर में दबी हुई अन्य धुकधुकियों सोचो तो.. कि स्पंद ऊब..... पीड़ा भरा उत्तरदायित्व भार हो चला, कोशिश करो, कोशिश करो, जीने की जमीन में गड़कर भी।[2]

मोहन राकेश ने आधुनिकता बोध के धरातल पर अस्तित्ववादी चिंतन के पार्श्व में अपने उपन्यास की रचना है। इसका विवेचन करते हुए यह कहना अधिक उचित लगता है कि मोहन राकेश का यह सामाजिक अस्तित्व चिंतन मूलतः व्यक्तिवादी स्तर पर अपनी गहरी छाप बनाए हुए समाज में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्षमय मानव की एक ऐसी कथात्मक अभिव्यक्ति के रूप में उभरता है जो समाज में रहकर भी समाज से जुड़े पाने में विवशता अनुभव करता है। समाजिक अस्तित्व के आधार पर 'अंधेरे बंद कमरे' का विवेचन निम्न प्रकार प्रस्तुत है–

''ठकुराइन के अतिरिक्त 'अंधेरे बंद कमरे' के सभी पात्र व्यक्तिवादी हैं। वे धर्म और ईश्वर के प्रति कोई आस्था नहीं रखते। सामाजिक रूढ़ियों की उन्हें कोई चिंता नहीं है यहां प्रत्येक पात्र समाज और परिवार में रहते हुए भी ''आत्म निर्वासित'' जीवन जी रहा है। हरवंश और नीलिमा पति–पत्नी होते हुए भी निर्वासित जीवन जी रहे हैं। मधुसूदन, सुषमा ऊबानू, इबादत अली अकेलेपन से संत्रस्त है। मूल्यों के प्रति विद्रोह की छटपटाहट एक विचित्र स्थिति को जन्म देती है। 'तुम्हारे साथ और तुम्हारे बिना, दोनों ही तरह जिंदगी मुझे असंभव लगती है। जीवन में एक दूसरे के लिए पूरक की संभावनाओं को नकारते हुए नीलिमा और हरवंश अलग–अलग रास्ता रास्ता चुनते हैं और असफल रहते हैं। सामाजिक यथार्थ का संत्रास मधुसूदन, सुशमा, जीवन भार्गव की वरण की स्वतंत्रता के अधिकार का गला घोट देते हैं।[3] ''न आने वाला कल'' में धार्मिक आस्था के प्रति स्पष्ट विद्रोह व्यक्त हुआ है। उसके पात्र पादरी के ''सरमन'' को पचा नहीं पाते और घुटन महसूस करते हैं। मनोज विवाहित होते हुए भी एकाकी, उदास और ऊब का जीवन व्यतीत करने पर अपने को एक 'भय' में जकड़ा हुआ भी अनुभव करता है– वह डर किस चीज का था? उस खामोशी का? अपने अकेलेपन का अपनी सांसों में रुकावट आ जाने के खतरे का? या कि वहां होते हुए भी ना होने, बीत चुकने के एहसास का।[4]

दूसरी ओर बोनी अपनी सुंदरता का उन्मुक्त उपयोग करती है वह किसी पुरुष के नियंत्रण को स्वीकार नहीं करती, यौन नैतिकता में उसे बिल्कुल विश्वास नहीं। शोभा अपने सामाजिक अस्तित्व को बनाए रखने के लिए मनोज से पुनर्विवाह करती है। परंतु स्वचेतना उसे मनोज के साथ बांधकर नहीं रहने देती। तीसरी स्थिति में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्ष करते हुए मनोज स्कूल से त्यागपत्र देने का निर्णय लेता है।

''अंतराल'' के सभी पात्र अपने– अपने द्वीपों में जीते हैं। सीमा अपनी मां और भाभी (श्यामा) से कटी रहती है और स्वतंत्रता का भरपूर फायदा उठाती है। उसे सब ''अजनबी'' दिखाई देते हैं। जब तक देव जिंदा रहा वह उससे भी एकरस नहीं हो सकी। वह चेतना के धरातल पर सोचती है और इसलिए कुमार से उसके संबंध कभी स्वभाविक नहीं हो पाए। कुमार स्वयं विवाहित है, परंतु वह विवाह भी उसके अकेलेपन को दूर करने में असमर्थ रहता है। कभी उसका भावात्मक संबंध कस्बे की

एक 'पीली लड़की से बना था, जो अभी तक उसकी चेतना में छाई हुई है। अस्तित्ववादी चिंतन के स्तर पर आधुनिक बोध से संपन्न रचनाकार प्रायः भौतिक अस्तित्व का चिंतन ही प्रधान मान लेते हैं और उनके पात्रों का व्यवहार और कार्य का निर्दिष्ट लक्ष्य की और विकसित होता दिखाई देता है। यह लक्ष्य मात्र भौतिक अस्तित्व चेतना है। मोहन राकेश ने आधुनिकता के धरातल पर प्रकाशित रचनाओं में भौतिक अस्तित्व की महत्ता को प्रतिपादन करते हुए यह भी स्पष्ट किया है कि उसके औपन्यासिक पात्रों में ऐसी मानसिकता विद्यमान है, पर वे उसके दास नहीं हैं, परिस्थितिक परिवेश में उससे मुक्त भी नहीं है। यही कारण है के भौतिकवादी युग में व्यक्ति अपने लिए तमाम सुविधाएं जुटा लेना चाहता है वह विलासी जीवन जीता है। उसके संबंधों का एकमात्र आधार आर्थिक होता है और इस कारण से व्यक्ति स्वार्थ केंद्रित हो जाता है उसकी संवेदना मरने लगती है परंतु अपने सामाजिक अस्तित्व के कारण दुहरा –तिहरा जीवन जीता है। मोहन राकेश के अंधेरे बंद कमरे उपन्यास का पात्र हरवंश स्वयं असफल रहने के कारण अपनी पत्नी के माध्यम से अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता है और असफल रहने पर चढ़ जाता है। नीलिमा भी भौतिकवादी है। वह यूरोप जाकर हरवंश ऊबानू के साथ होटल में रुक जाती है, वह टुप के साथ वापस न आकर स्वतंत्र जीवन जीना चाहती है। मधुसूदन प्रत्यक्ष रूप से आदर्श से बंधा रहता है परंतु वह ठकुराइन की प्रत्येक भंगिमा में यौन संदर्भों को ही देखता है। वह शुक्ला के प्रति आसक्त होने पर भी इच्छा व्यक्त नहीं कर पाता। इस प्रकार उपन्यास के अधिकांश पात्र भौतिक जगत में अपने स्वार्थ से पीड़ित दुहरा जीवन जीते हैं। अपनी भौतिक कामनाओं के उत्कृष्ट चिंतन के धरातल पर 'न आने वाला कल' उपन्यास के सभी पात्र अपने –अपने स्वार्थ में जकड़े हैं। वहां सभी एक दूसरे के प्रति शड्यंत्र करते हैं ताकि उनका अपना भौतिक संबंध स्थिर बना रहे उनके अस्तित्व का संघर्ष उनकी स्वार्थलोलुपता के सामने दम तोड़ देता है।

बानी अपने स्वार्थ में कई लोगों से शारीरिक संबंध स्थापित करती है। चेरी और लैरी मनोज के 'त्यागपत्र' का अपने हित में लाभ उठाना चाहते हैं। शारदा दूसरा विवाह करने की इच्छा व्यक्त करती है। मनोज स्वयं त्यागपत्र देने के बाद भी भौतिक अस्तित्व की चिंता से उबर नहीं पाता। भौतिक अस्तित्ववादी चिंतन के परिणाम स्वरुप 'अंतराल' के सभी पात्र दुहरी मानसिक स्थिति में जी रहे हैं। बाजी और सीमा इसलिए श्यामा को झेल रहे हैं क्योंकि वह कमाती है। बेबी के लिए परिवार की जरूरत श्यामा को उस घर से जोड़े रखती है। अन्यथा वह कभी भी वहां से चली गई होती कुमार जी ने अर्थ का नाम देते हुए भी श्यामा से शारीरिक संबंध बनाना चाहता है। श्यामा कुमार के मंडी आने की संभावना में अपनी सहेलियों से कुमार के प्रति सामान्य भाव प्रकट करती है परंतु उसकी वास्तविकता का पता उसकी वास्तविकता का पता उसकी 'फंटेसी' कल्पना से चलता है। व्यक्तिवादी अस्तित्व चेतना बताती है कि जीवित रहना ही मनुष्य की नियति है। उसे जीवन का अर्थ चूक जाने की स्थिति में भी लाचार होना होकर जीना है क्योंकि पुरानी मान्यताएं अर्थहीन हो चुकी हैं और मनुष्य के सामने कोई ठोस विकल्प भी नहीं है ईश्वर की अनुपस्थिति के भाव ने उसे स्वतंत्र और अकेला बना दिया है। अपनी असहायता के लिए वह कोई बहाना नहीं ढूंढ सकता। मनुष्य की यह नियति उसे व्यक्तिवादी बनाती है। वह निरउद्देश्य और दिगभ्रांत रहता है। 'अंधेरे बंद कमरे' उपन्यास के पात्रों में शुक्ला और सुषमा की तरफ से निराश मधुसुधन को जीवन व्यर्थ लगता है और अपने व्यक्तिवादी अस्तित्व का संकट झेलता हुआ मधुसूदन अंततः ठकुराइन के घर जाने का निर्णय करता है क्योंकि वही पहुंचकर उसको अपना अस्तित्व

सुरक्षित दिखाई देता है। हरवंश और नीलिमा दोनों व्यक्तिवादी पात्र हैं। अपने जीवन को अर्थ देने में असफल हरवंश नीलिमा में संभावना देखता है और घर त्याग कर चली जाने वाली नीलिमा वैयक्तिक चेतना के कारण ही पुनः वापस आ जाती है। सुषमा भी व्यक्तिवादी है। यही अस्तित्व संकट मधुसूदन के साथ उसके जुड़ाव को समाप्त कर देता है।

व्यक्तिवादी अस्तित्व चिंतन की परिणति में 'न आने वाला कल' के पात्र भी जीवन को कोई अर्थ देते हुए नहीं जीते हैं। बानी के सामने कोई बाधा नहीं है। स्कूल के टीचर्स सड़ चुकी व्यवस्था में भी अपनी स्थिरता बनाए रखने के लिए विवश हैं। मनोज अपने जीवन की निरर्थकता से ऊबकर 'आत्महत्या' की बात सोचता है, परंतु उसकी वैयक्तितक चेतना उसे ऐसा करने से रोकती है। शोभा पुनर्विवाह के बाद मनोज से एडजस्ट नहीं कर पाती और घर छोड़कर खुर्जा चली जाती है। परंतु अपने अस्तित्व की चिंता के कारण ही वह मनोज को खुर्जा से बार–बार पत्र लिखती है। व्यक्तिवादी स्तर पर अपने अस्तित्व की चिंता से ग्रसित अंतराल के पात्र कुमार और श्यामा के सामने भी जीवन का कोई अर्थ नहीं है। इसे अर्थ देने के लिए जब वे एक दूसरे के निकट आते हैं तो उनकी व्यक्तिगत चेतना उन्हें रोक देती है। कुमार के आवासीय फ्लैट में आकर दोनों स्वतः एक दूसरे के लिए समर्पित होकर अपनी दैहिक मांग की पूर्ति में अपनी अस्तित्व चेतना ही खोज पाते हैं आंतरिक संदर्भ की गहनता यौन– संबंधों के बीच नहीं उभरती तभी कुमार के साथ यौन संसर्ग करते समय श्यामा को अपने पूर्व प्रेमी की स्मृति उसके निजी अस्तित्व चिंतन की परिणति का आभास देती है। सीमा का जीवन भी व्यर्थता बोध से पीड़ित है वह आत्म केंद्रित एवं आत्मरति से ग्रसित ऐसी नारी पात्र के रूप में अपने अस्तित्व चेतना की जटिलता चरितार्थ करती है जहां रात्रि पीकर लौटने पर दर्पण के समझ निर्वस्त्र रूप से अपनी शारीरिक संरचना के प्रति आत्माओं से परितृप्ति पाती है श्यामा देव के सामने कभी खुल नहीं पाती और देव भी अपने ही पीड़ा में घुटकर मर जाता है। अस्तित्ववादी चिंतन की आधार भूमि पर विकसित मोहन राकेश के तीन उपन्यास मुख्यतः नारी – पुरुष के बदलते संदर्भ और उनके बीच पनपते जटिल संबंधों की सूचना व्याख्या प्रस्तुत करते हैं युद्धेत्तर संत्रास औद्योगिक प्राविधिक युग का वर्चस्व एवं स्खलित होती प्राचीन परंपराओं व नैतिक संस्थाओं ने व्यक्ति के अपने अस्तित्व के प्रति की एक संकट खड़ा कर दिया है। फलतः व्यक्ति केवल अपने बारे में सोचता है। सामाजिक और पारिवारिक दायित्व –बोध को वह बोझ समझता है और सर्वथा मुक्त जीवन की कामना करता है।

संदर्भ

1. अग्रवाल, भारत भूषण. हिंदी उपन्यास में पाश्चात्य प्रभाव, किताबघर –2001 पृष्ठ **380.**
2. मुक्तिबोधः चांद का मुंह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ– 1964 पृष्ठ **64.**
3. मोहन, राकेश. अंधेरे बंद कमरे, राजकमल प्रकाशन– पृष्ठ **153.**
4. मोहन, राकेश. न आने वाला कल; राजकमल प्रकाशन–1968– पृष्ठ **11.**